कविताओं का यह संग्रह

मैं अपने अनुज

श्रीमान् राजेन्द्र प्रसाद सिंह को

समर्पित करता हूँ।

भूमिका

अपनी कविताओं का यह छोटा-सा संग्रह मैंने खास कर उन नवयुवकों के लिये तैयार किया है, जो अपने दिल में तरुणाई का तकाजा महसूस करते हैं; जो जवान हैं, उम्र से नहीं—विचारों से, जिनका खून गरम है, बुखार से नहीं—अन्दर की आग से, जिनकी मसें भींग चुकी हैं या भींगती आ रही हैं, और जो 'जीवन और यौवन' की देहली पर त्याग, साहस और वलिदान की भावनाएँ लेकर एक इंगित की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

मैं समझता हूँ, मेरी ये कविताएँ निश्चय उन्हें रुचेंगी, जिनके पैर दुनिया को मापने के लिए आगे बढने को तैयार हैं; जिनकी भुजाएँ संसार-सागर की तरंगों मे उलझने के लिये कसमसा रही हैं; जिनकी छाती जीवन के संघर्ष और कठिनाइयों को झेलने के लिये खुली है—तनी है और जिनकी आँखें हिमाचल के उन शिखरों की तरफ देख रही हैं, जिनपर विजय पाने के लिये आज का मानव अधीर है।

और मैं देखना चाहता हूँ, इस छोटी-सी किताव को, उन सभी महत्त्वाकांक्षी तरुणों के फौलादी हाथों में, जिनका मस्तक गौरव तथा स्वाभिमान के भावों से ऊँचा है, उठा है।

और मैं आशा करता हूँ कि साहस, बल और वलि की यह मेरी वाणी आप ही देश के उन शत-शत कण्ठों में अपना स्थान बना लेगी, जो वर्त्तमान युग के साथ कदम-ब-कदम चल रहे हैं तथा आगे आनेवाले युग का स्वागत करने के लिये प्रस्तुत हैं।

इस संग्रह की अधिकांश कविताएँ मेरे 'आरसी' नामक कविता-पुस्तक से ली गयी हैं। दस-पाँच नयी भी हैं। और केवल एक कविता—'विभेद' शीर्षक—'कलापी' से ली गयी है, जिसके लिये उपर्युक्त काव्य-ग्रन्थ के प्रकाशक और 'ग्रन्थमाला-कार्यालय' के स्वत्त्वाधिकारी श्री देवकुमार मिश्र को मैं धन्यवाद देता हूँ।

मुजफ्फरपुर,
ता० २३-५-४४ ई०।

—आरसीप्रसाद सिंह
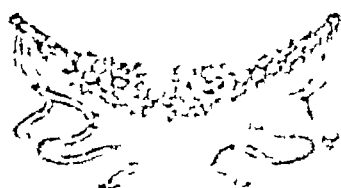
विषय-सूची

क्रमांक	शीर्षक	पृष्ठ
*	जीवन और यौवन	X
१	चल सम्मुख विश्वास-चरण धर	१
२	ओ बाँकी चितवन वाले	२
३	चिड़िया	७
४	हिम्मत	१०
५	जवानी	१२
६	जीवन	१५
७	ठोकर	१७
८	जीवन-वसन्त	२०
९	प्राण, सुख की बात कर	२४
१०	अरुण-रक्त चिर-शक्त तरुण हम	२६
११	नूतन और पुरातन	२७
१२	तड़ित-पताका उड़ती जिसपर	२९
१३	हे प्राणों के प्रिय जीवन-धन	३०
१४	आयी इधर जवानी, आया	३२
१५	ओ मेरे मतवाले यौवन	३४
१६	जाग तू ओ राष्ट्र-वाणी	३५
१७	मुझे चाहिये दुर्मद यौवन	३७
१८	वृथा जन्म, उसका जीवन	३९
१९	मुझे बना दे मा, निर्भय	४१

२० तापस-तरुणों के सेनादल ४३
२१ मार्ग-भ्रष्ट ४५
२२ जीवन की ज्योतिर्धारा ४७
२३ इस पृथ्वी पर कौन अमर-पद पायगा ४६
२४ मेरा विद्रोही कवि-जीवन ५१
२५ जीवन का झरना ५४
२६ चिरयात्री ५६
२७ जवानी का लड़कपन ६५
२८ अप्राप्त ६८
२९ सत्य ६६
३० मानव, तू निर्भय बन ७०
३१ कर्त्तव्य ७२
३२ साहस ७४
३३ आगे बढ़ ७७
३४ विभेद ८१

जीवन और यौवन

मैं आया हूँ जीवन लेकर,
मैं यौवन लेकर आया हूँ!

❀ ❀ ❀

आतुर कण-कण से मिलने को
फड़क रही हैं मेरी बाँहें!
निकल गया मैं जिधर, उधर ही
टूटे शिखर, गयीं बन राहें!
मुझमें जादू है, मिट्टी को
छू दूँ, तो बन जाये सोना!
मेरे हृदय-कमल से सुरभित
है पृथ्वी का कोना-कोना!

दिन में चमका प्रखर सूर्य-सा,
निशि में शशि बन मुसकाया हूँ!
मैं आया हूँ जीवन लेकर,
मैं यौवन लेकर आया हूँ!

❀ ❀ ❀

सावन की घनघोर घटा-सा
मैं बरसूँगा, मैं लरजूँगा;
और वज्र-सा भीम व्योम के
वक्षस्थल पर मैं गरजूँगा!
चूमा करती है बिजली को
बादल में हँस मेरी हस्ती!
रज-रज के जर्जर प्राणों में
भर दूँगा मैं अपनी मस्ती!

जगती के सौन्दर्य-फूल पर
भौंरा बन कर मँड़राया हूँ!
मैं आया हूँ जीवन लेकर,
मैं यौवन लेकर आया हूँ!

❀ ❀ ❀

कीट-पतंगों-सा मैं भी क्या
यों-ही जग में मर जाऊँगा?
दो दिन के फूलों-सा खिलकर
मैं भी क्या यों झड़ जाऊँगा?
मैं पाऊँगा विजय मृत्यु पर:
निश्चित ही है, मैं पाऊँगा!
मुझको है विश्वास चिरन्तन,
मैं बुझ कर भी जल जाऊँगा!

वारम्बार मौत के पंजों से
यद्यपि मैं टकराया हूँ !
मैं आया हूँ जीवन लेकर,
मैं यौवन लेकर आया हूँ !

❀ ❀ ❀

आँखें क्या दिखलाते मुझको ?
क्या तुमसे भी डर जाऊँ मैं ?
देते हो अभिशाप मुझे क्यों ?
काट काल को भी खाऊँ मैं !
झूम गया हूँ मैं लहरों मे,
खेल गया हूँ मैं द्वन्द्वों मे:
ताल-ताल पर थिरक-थिरक कर
नाचा हूँ सौ-सौ छन्दों में !

गति मेरी कब रुकी, कभी क्या
कठिनाई से घबड़ाया हूँ ?
मैं आया हूँ जीवन लेकर,
मैं यौवन लेकर आया हूँ !

❀ ❀ ❀

बात अमृत की क्या है, विष भी
पी लूँ और पचा डालूँ मैं !
जिसको जगत 'असम्भव' कहता,
उसका नाम मिटा डालूँ मैं !

मेरा खून गरम है, जैसे
पानी में लग गयी आग हो !
मेघ - रन्ध्र से जैसे फूटा
दीपक का वह प्रलय-राग हो !

मैं वर्षा-वन में रोया हूँ,
मैं वसन्त-वन में गाया हूँ:
मैं आया हूँ जीवन लेकर,
मैं यौवन लेकर आया हूँ।

६ ६ ६

मुझमें तरुण व्याघ्र का पौरुष,
सिंह-नाद हृत्-कम्पन-कारी !
मलयानिल-सा डोल गया हूँ
मन्द-मन्द मैं कुंज-विहारी !
और कभी मैं फैल गया हूँ
आँधी बन कर आसमान पर !
तोड़ कभी चट्टान फूट मैं
निकला हूँ प्रपात-नद बन कर !

पैठा हूँ पाताल-गर्भ में,
महा-सिन्धु-सा लहराया हूँ !
मैं आया हूँ जीवन लेकर,
मैं यौवन लेकर आया हूँ !

चल सम्मुख विश्वास-चरण धर

चल सम्मुख विश्वास-चरण धर !

दुर्गम है यह जीवन का पथ,
उर में शत-शत भग्न मनोरथ,
पथिक श्रान्ति से खिन्न और श्लथ,

भय से तो रे श्रेष्ठ मरण वर !

आशा से उन्नत, श्रद्धा-नत,
प्रतिपल-क्षण जन-सेवा में रत,
तू अजेय, पौरुषमय, अक्षत,

है विधि की भी स्वयं शरण, नर !

ओ बाँकी चितवनवाले

ओ बाँकी चितवनवाले!

तुम भारत के भाग्य-विधाता,
तुम स्वदेश के मतवाले!

ओ पैरों में पायलवाले!

तुममें अर्जुन का साहस है
और भीष्म का प्रण भीषण!
तुममें रघु-दिलीप का शोणित,
हरिश्चन्द्र का सत्य-वचन!

ज्ञान जनक-गौतम का तुममें,
बुद्ध-देव का त्याग विमल;
क्षमता है तुममें उपेन्द्र की,
महावीर का है भुज-बल !
राम-कृष्ण बन तुमने युग—
युग में भू के संकट टाले !
ओ डगमग-से पगवाले !

ध्रुव का-सा विश्वास तुम्हींमें,
तुम प्रह्लाद-सदृश निश्चल;
लव-कुश-से तुम वीर, बभ्रु-
वाहन का तुममें रण-कौशल !
तुम अभिमन्यु, महाभारत में
चक्र - व्यूह के संहारक;
और शिवानी-पुत्र तुम्हीं हो
वीरभद्र, विप्लव - कारक !
भरत तुम्हीं, कर बाल-केशरी के
मुख में जिसने डाले !
ओ मोहन, मुरलीवाले !

तुम चाणक्य निपुण हो गुण में,
तुम प्रताप चिर-अभिमानी !
तुम में काव्य-शक्ति भूषण की,
कर्ण और वलि-से दानी !

देख, अरे ! इन झोपड़ियों में
जो भूखा है, नंगा है !
वह है शिखर हिमालय तेरा,
यह तेरी ही गंगा है !
तेरा यह उपवन उजड़ा है,
पड़ा लुटेरों के पाले !
ओ भारत के रखवाले !

तुझसे जननी को आशा है,
तू ही एक सहारा है !
तू सूनी कुटिया का दीपक,
तू आँखों का तारा है !
जब-जब बढ़ा अधर्म धरा पर,
तूने है अवतार लिया;
और, दानवों के पंजे से
मानव का उद्धार किया !
तू सुन, बेड़ी-हथकड़ियों की
झन - झन, कैदी के नाले !
ओ बाँकी चितवनवाले !

चिड़िया

पीपल की ऊँची डाली पर
बैठी चिड़िया गाती है!
तुम्हे ज्ञात क्या अपनी
बोली में संदेश सुनाती है?

चिड़िया बैठी प्रेम-प्रीति की
रीति हमें सिखलाती है!
वह जग के बंदी मानव को
मुक्ति-मंत्र बतलाती है!

वन में जितने पंछी हैं, खंजन,
कपोत, चातक, कोकिल;

काक, हंस, शुक आदि वास
करते सब आपस में हिलमिल।
सब मिल-जुलकर रहते हैं वे,
सब मिल-जुलकर खाते हैं;
आसमान ही उनका घर है;
जहाँ चाहते, जाते हैं।
रहते जहाँ, वहाँ वे अपनी
दुनिया एक बसाते हैं;
दिन भर करते काम, रात में
पेड़ों पर सो जाते हैं।

उनके मन में लोभ नहीं है,
पाप नहीं, परवाह नहीं;
जग का सारा माल हड़पकर
जाने की भी चाह नहीं।
जो मिलता है अपने श्रम से,
उतना भर ले लेते हैं;
बच जाता जो, औरों के हित
उसे छोड़ वे देते हैं।
सीमा-हीन गगन में उड़ते,
निर्भय विचरण करते हैं;
नहीं कमाई से औरों की
अपना घर वे भरते हैं।

वे कहते हैं, मानव ! सीखो
तुम हमसे जीना जग में;
हम स्वच्छंद और क्यों तुमने
डाली है बेड़ी पग में ?
तुम देखो हमको, फिर अपनी
सोने की कड़ियाँ तोड़ो;
ओ मानव ! तुम मानवता से
द्रोह–भावना को छोड़ो !

पीपल की डाली पर चिड़िया
यही सुनाने आती है
बैठ घड़ी भर, हमें चकित कर,
गा–कर फिर उड़ जाती है।

हिम्मत

पर्वत को है ताकत, आँधी
स्वयं वहाँ रुक जाती है;
दूब हुई कमजोर, देख तूफान
विवश झुक जाती है।

पर्वत के मस्तक पर चढ़ना
एक बार तो मुश्किल है;
पैर पकड़ लेती पथिकों के,
दूबों का ऐसा दिल है।

उमड़ मेघ-माला पर्वत की
छाती से टकराती है;
किन्तु वही कोमल दूर्वों पर
बरस-बरस-सी जाती है।

पर्वत कुछ न समझता, क्या हैं
ये आँधी, पानी, पत्थर;
मर-मरकर भी दूब यही कहती
है–'हम हैं अजर-अमर'।

चलता है तूफ़ान, अगर हो
तुममें लड़ने की हिम्मत;
तो आओ, सीना ऊँचा कर;
अटल रहो बनकर पर्वत।

चलता है तूफान, अगर तुममें
लड़ने की शक्ति न हो;
तो भी चिंता नहीं, बने तुम
हरी-हरी-सी दूब रहो।

पर्वत की बाँहों में ताकत,
दूर्वों का मन है दुर्बल;
लेकिन, दोनों ही कर देते
आँधी की गति को निष्फल।

मगर पेड़, जिनमें न शक्ति
है और खड़े रह जाते हैं:

मूल समेत वही क्षण भर में
उखड़, आह ! पछताते हैं।

रुक जाता है वेग बाढ़ का
पर्वत के आगे आकर;
बच जाती है दूब नदी की
धारा से नीचे जाकर।

जो दुर्बल अभिमानी तरुगण
वहीं अड़े रह जाते हैं,
वे ही पड़कर जल-प्रवाह में
पल भर में बह जाते हैं।

ताकत है, तो तुम आँधी को
अपनी बाँहों पर झेलो !
हिम्मत है, तो तुम पर्वत-से,
पानी-पत्थर से खेलो !

यदि दुर्बल हो, तो कुछ सोचो;
जीना है, तो झुक जाओ।
चलता है तूफान, दूब-सी तुम
विनम्रता अपनाओ।

जवानी

मेरे रोम-रोम से विह्वल
फूट-फूट कर निकल, जवानी!
अंग-अंग से, भृकुटि-भंग से
चिनगारी बन मचल, जवानी!

अरी, टहल तू खुशी-खुशी
इस आंगन में मेरे जीवन के!
धो दे गंगा की लहरों-सी
पाप-ताप, मैलापन मन के!

आसमान में उड़ें हृदय के
भाव अमित, पर खोल, जवानी!
असफलता के सिर पर जगते
जादू-सी चढ़ बोल, जवानी!

आँखों की गति बाँकी, बाँकी
चाल, बाँकपन हो नस-नसमें;
दुनिया हो मुट्ठी में मेरी,
खुद न रहूँ पर अपने वस में !

छलको बात बात से मेरी,
मेरे छल-छिद्रों से छलको !
उमड़ो मेरे गुण-दोषों से,
ढक लो जगको, नभको, थलको !

आग लगे पानी में; दिल हो
जाये मद पीकर दीवाना !
विद्रोहिणि, मेरे जीवन में
फूँक राग वह अलमस्ताना !

सिखला दे तू आज मुझे वह
पत्थर पिघलाने की भाषा !
मरने की तदबीर बता कुछ,
ला विष की उन्मत्त पिपासा !

तेरी क्रांति-तरंगों में ही
ढूँढे मेरा लहू रवानी !
जाग, जाग मेरे जीवन में,
ओ मेरी मदभरी जवानी !

जीवन

चलना है, तो चल आँधी-सा;
बढ़ता जा आगे हू-हू !
जलना है, तो जल फूसों-सा;
जीवन में करता धू-धू !

क्षण-भर ही आँधी रहती है;
आग फूस की भी क्षण-भर !
किन्तु, उसी क्षण में हो जाता
जीवनमय भू से अम्बर !

मलयानिल-सा मन्द-मन्द
मृदु चलना भी क्या चलना है ?
ओदी लकड़ी-सा तिल-तिल कर
जलना भी क्या जलना है ?

आग वही, जिसकी ज्वाला से
भस्म बने, जो वस्तु झुके;
वेग उसीको कहते हैं, जो
बाधाओं से नहीं रुके !

जब तक चलता है, चलता जा;
सोच नहीं, सम्मुख क्या है ?
जब तक जलना है, जलता जा;
फिक्र नहीं, दुख-सुख क्या है ?

रोगी बन, सुकुमार सेज पर
तू कायर की मौत न मर !
पानी से भी जो बदतर हो,
पैदा ऐसी आग न कर !

क्षण भर को थोड़ा न समझ
तू, यदि वह है गौरव का क्षण!
व्यर्थ हुआ, मुर्दों-सा पाया
यदि तुमने लम्बा जीवन !

मिटना ही है जब आखिर,
तब एक बार चलकर मिट जा;
बुझना ही है जब आखिर,
तब एक बार जलकर बुझ जा!
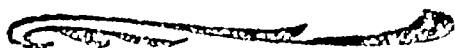
ठोकर

हम करते हैं गलती कोई,
तब लगती है हमको ठोकर;
जो वीर, सँभल बढ़ जाते वे;
कापुरुष बैठ रहते रो कर !

वे ही गिरते हैं, जो निर्भय
हो कर घोड़े पर चढ़ते हैं;
आते हैं काम वही पहले,
जो सैनिक आगे बढ़ते हैं !

ठोकर लगने से रुक जाये,
ऐसी भी कोई इच्छा है !
वीरों के लिये यहाँ तो बस,
ठोकर ही एक परीक्षा है !

गिरते हैं सभी, मगर कायर
गिर कर न कभी उठ पाते हैं;
सचमुच हैं वही बहादुर, जो
गिरते हैं, फिर उठ जाते हैं !

लगती है ठेस, लगे; आगे
बढ़ना है हमें अचल होकर!
हम विघ्नों के भी विघ्न बनें,
ठोकर को दे दें हम ठोकर!

जब ध्यान न देते नियमों पर,
हम रोगी तब हो जाते हैं;
ठोकर से हमको ईश्वर भी
अपनी गलती बतलाते हैं!

औषधि की हमें जरूरत है;
हमको चंगा कर देने को!
ठोकर की हमें जरूरत है,
हममें हिम्मत भर देने को!

सच्चे न किसीसे डरते हैं;
ठोकर से कभी न घबराते;
कर जाते काम वही जग में,
मरनेवाले हैं मर जाते!

जो बढ़नेवाले हैं, ठोकर से
आगे ही बढ़ जाते हैं;
जो चढ़नेवाले हैं, वे तो
पर्वत पर भी चढ़ जाते हैं!

ठोकर लगते ही रुक जाये,
वह भी क्या कोई जीवन है?

चलते—चलते जो थक जाये,
वह भी क्या कोई यौवन है ?

रुक जाती पेड़ों को उखाड़
आँधी भी टकरा गिरिवर से;
सोने की जाँच कसौटी पर
होती, वीरों की ठोकर से !

ठोकर जीना सिखलाता है,
मुर्दा न बनें जीवन खो कर;
मुर्दे सो जाते चिर-दिन को,
जीवित उठ जाते हैं सो कर !

ठोकर लगने पर हम देखें,
अपनी कमजोरी को जानें;
ठोकर खाने का मतलब है,
हम अपने को पहले पहचानें !

फिर लक्ष्य हमारा यदि ध्रुव है,
हम सफल रहेंगे ही हो कर;
बाधा हमको कर सकती क्या ?
क्या कर सकती हमको ठोकर ?

जीवन-वसन्त

मैंने वसन्त के पुष्पों से
पूछा-'तुम कितने हो सुन्दर?'
वे बोले-'हाँ, हमने पाया
है विधि से सुन्दरता का वर!
हम उपवन में प्रति-दिन खिलते,
प्रतिक्षण हँसते ही रहते हैं!
हम झड़ जाते, मुरझा जाते;
पर, यह न किसीसे कहते हैं!'

मैंने वसन्त के तरुओं से
पूछा-'तुम कितने हो शीतल?'
वे बोले-'हाँ, हममें आये
हैं नूतन ये पल्लव कोमल!
रस मिट्टी का लेकर देते
हम फूल और फल मधुर-पके;
यह सघन हमारी छाया है,
रुक जाते राही जहाँ थके!'

मैंने वसन्त की लतिका से
पूछा—'तुम कितनी हो कोमल!'
वह बोली—'हाँ, बढ़ती जाती
मैं अपने पथ पर हूँ प्रति-पल!
सम्बल का ज्ञान नहीं मुझको,
निज दुर्बलता का ध्यान नहीं;
मैंने सीखा है झुकना; है
मुझमें गौरव-अभिमान नहीं!'

मैंने वसन्त—मलयानिल से
पूछा—'तुम कितने हो निर्मल!'
वह बोला—'मैं वितरण करता
जग-जग में कुसमों का परिमल!
मैं कुंज-कुंज का सौरभ ले,
घर-घर में सबको दे आता;
सुख-सुषमा-शीतलता देकर,
जग की दुख-ज्वाला ले आता!'

मैंने वसन्त के विहगों से
पूछा—'तुम कितने हो चंचल!'
वे बोले—'हम गाते रहते
आनन्द-गीत, प्रतिक्षण, प्रतिपल!
वन-उपवन में भरते रहते
अपना [illegible] किल कूजन!

हममें नवजीवन का स्वर है;
हममें है भरा नवल यौवन !'

मैंने वसन्त-वन को देखा,
फिर एक बार देखा भू को;
मैंने मलयानिल को देखा,
फिर भू की इस जलती लू को !
उस जग में फूलों की दुनिया,
नव-क्रीड़ा-कौतुक करती थी;
इस भू में, मनुजों की टोली
रो-रो कर निशि-दिन मरती थी !

मानव, यह दिग्विजयी मानव,
पद-दलित आज शोषित.पीड़ित;
जग में अशेष चीत्कार, दैन्य,
मानव के शोणित से जीवित !
कंकाल—प्रेत—से भयकारी,
यह लगता है, जैसे दानव;
व्याकुल श्मशान के रोदन में
यह होता है सुख का उत्सव !

सरिता बहती ही रहती है;
कोकिल-गण गाते ही रहते !
उन्मद वसन्त के वैभव में
आनन्द मनाते ही रहते !

हँसते ही रहते फूल सदा,
पल्लव-दल हिलते ही रहते;
ऊषा मुसकाती ही रहती,
नीरज-दल खिलते ही रहते !

जिनमें जीवन है, यौवन है;
वे सुख से इठलाते ही !
चाँदनी उतरती भूतल पर,
मधुकर-गण वन में गाते ही !
कर लेते ही मन की बातें,
अपना संसार बसाते ही;
वल्लरियाँ चढ़तीं पेड़ों पर,
तरु का आलिङ्गन पाते ही !

फूलों की दुनिया भी पल-भर,
मधुऋतु का वैभव भी नश्वर;
फिर भी न जगत में जीवन का,
मधु का प्रवाह रुकता क्षण-भर !
मैंने उस दुनिया को देखा,
वन-वन में छाया था वसन्त;
फिर, एक बार देखा भू को,
हा-हा-रव मुखरित था दिगन्त !

प्राण, सुख की बात कर

प्राण, सुख की बात कर:
हो सके, तो इस अमा को
पूर्णिमा की रात कर!

जिन्दगी रो-रो बिताई;
आज भी तो विहँस, भाई!
आँसुओं से मत हृदय—
मधुमास की बरसात कर!

शूल को भी फूल कर दे;
धूल में भी स्नेह भर दे!
खिल उठे जग-पद्म, शुचि को
भी शरत का प्रात कर!

गान भर पाषाण में भी;
हो सुधा विष-पान में भी!
रुदन हो मुस्कान, कुछ यों
तार पर आघात कर!

पा किसीको आप खो जा;
प्रेम-मधुपालाप हो जा!
शाप हो वरदान, पवि को
भी विमल जलजात कर!

प्यार दिल से करे अरि भी,
विन्दु-सम हों सिन्धु-सरि भी;
मार दे भृगु लात, तो
हरि का क्षमामय गात कर!

अरुण-रक्त चिर-शक्त तरुण हम

अरुण-रक्त चिर-शक्त तरुण हम !

आँधी-से छा जाते सत्वर,
चिर-यौवन के अन्तरिक्ष पर,
हम कठोर-निर्द्वन्द्व वज्र-सम,

हिम-से मृदु-सुकुमार करुण हम !

चलते जब हम मुक्ति-सैन्य-दल,
व्योम विकम्पित, पृथ्वी टलमल;
ले आते जग में नवीन युग,

नवजीवन का प्रात अरुण हम !

नूतन और पुरातन

झड़ गया काल के तरु से जो
यह शुष्क-पत्र सा एक वर्ष;
लो, खिल आया उसमें तत्क्षण
पल्लव नवीन युग का सहर्ष !

मिट्टी में मिल कर बीज जन्म
देते नव वृक्षों का विशाल;
निष्फल होकर ही प्रति वत्सर
झुकता मधुमय फल से रसाल।

यह नाश-सृष्टि की गति शाश्वत,
यह प्रलय-सृजन का क्रम अनन्त;
रो-रोकर जाती है वर्षा,
हँस-हँस कर आता है वसन्त !

शत-शत क्षण मिट कर रचते दिन,
दिन हैं करते निर्माण मास;
ये मास बनाते वर्ष, वर्ष से
होता युग-युग का विकास!

प्रतिपल के हटते ही उसपर
हो जाते सौ-सौ पल तत्पर!
ज्यों एक लहर के जाते ही
आ जाती तत्क्षण अन्य लहर!

द्रुत ठेल एक को पीछे, यह
बढ़ता आगे जीवन-प्रवाह;
क्षण-क्षण के कंकड़-पत्थर से
बनती युग-युग की एक राह!

जो बीत चुका वह क्षण निष्फल,
जो वर्त्तमान, वह चिर उज्वल!
जीवन को आगे बढ़ना है;
सम्मुख प्रकाश शाश्वत, निर्मल!

तड़ित-पताका उड़ती जिसपर

तड़ित-पताका उड़ती जिसपर,
झंझा मेरा रथ है !
हिल उठता है जिससे तरुवर,
थर-थर करने लगता भूधर,
विह्वल हो जाता है सागर,
शंकित जिसके भय से अम्बर,
आँधी मेरा पथ है !
सूर्य-चन्द्र मेरे दो लोचन,
वज्र-पात है मेरा गर्जन,
धूमकेतु मेरा है वाहन,
माना नहीं किसीका शासन,
मेरा बन्धन श्लथ है !
लोक-लोक में मेरा परिचय,
महाकाल का भी मैं हूँ भय,
प्रलय-सृजन है मेरा अभिनय,
मेरी दृग-ज्वाला से निर्दय,
मूर्च्छित-सा मन्मथ है !

हे प्राणों के प्रिय, जीवन-धन

हे प्राणों के प्रिय, जीवन-धन।

खुला सर्वदा ही रहने दो
मेरे अन्तर का वातायन;
जिससे त्रिविध समीरण आये
सभी दिशाओं से मनभावन।
भर जाये यह शान्ति-निकेतन
मधु-गन्धा-सौरभ से पावन।

लेकिन हाँ, इतना मत खोल;—
डोल उठे जिसके झोंकों में
हृदय-दीप की लौ ही लोल!

हे प्राणों के प्रिय, करुणामय !

रहे अरुद्ध सदा ही मेरा
जीवन-द्वार निरामय, निर्भय;
झाँक सके जिससे कुटीर में
प्रथम-प्रात का नित सूर्योदय !
देती रहें निरंतर किरणें
अपनी कात-कला का परिचय !

किन्तु, न हो इतना मोचन;—
प्रखर प्रभा की चकाचौंध से
बंद न हो जाये ही लोचन !

हे प्राणों के प्रिय, चिर-नूतन !

हों न बेड़ियाँ पैरों में, हाथों में
कड़ियाँ, तन में बन्धन;
पड़ा लोचनों के आगे हो
विस्तृत भू, प्रशस्त जग-प्रांगण !
कोई रोक न टोक कहीं हो,
गूँजे स्वतंत्रता का गायन !

सदा मुक्त हो मानस-प्राण;—
पर, न कहीं इस महामुक्ति में
मिले विशृङ्खलता का दान !

आयी इधर जवानी, आया

आयी इधर जवानी, आया
उधर झूमता मतवालापन;
उठीं घटाएं पूर्व दिशा से
औ पश्चिम से प्रखर समीरण !

दोनों में मुठभेड़ हो गयी
बीच-राह ही, लो, देखो अब !
लगीं बरसने रिमझिम-रिमझिम
रस-फुइयां, रस में डूबे सब !

भींगीं मसें निमिष में रस से;
सिहरा सारा जीवन, तन-मन;
आयी इधर जवानी, आया
उधर झूमता मतवालापन !

बेसुध था मैं आँखमिचौनी-
क्रीड़ा में अपने बचपन की;
कौन खींच ले आया, पता न,
स्वर्ण-देहली पर यौवन की?

उमड़ी रोम-रोम से मस्ती;
फूटे तान–तान से मधुकण;
आयी इधर जवानी, आया
उधर झूमता मतवालापन!

प्राणों में गूँजा यौवन का
कमल-कण्ठ-वन्दित स्वर कल रे!
तरह-तरह के अरमानों से
हृदय विकल रे, उथल-पुथल रे!

हटा सन्तरी ज्यों आँगन से,
त्यों ही मिला स्वर्ग-सिंहासन!
आयी इधर जवानी, आया
उधर झूमता मतवालापन!

ओ मेरे मतवाले यौवन

ओ मेरे मतवाले यौवन।

पल भर इस सूने-से जीवन में
भी धूम मचा ले यौवन।
ओ मेरे मतवाले यौवन।

पावस-सा मधु-रस बरसा दे;
जग की प्रणय-लता सरसा दे।
चार दिनों की उजियाली में
हँस ले और हँसा ले यौवन।
ओ मेरे मतवाले यौवन।

बहा-बहा दे मद की धारा;
डूब जाय जिसमें हिय सारा।
तू भर-भर दे, पीता जाऊँ
मैं प्याले पर प्याले यौवन।
ओ मेरे मतवाले यौवन।

अधरों पर अमृत-रस धर दे;
नयनों में मादकता भर दे।
अपनी अन्ध-गन्ध से मुझको
बना प्रमत्त निराले यौवन।
ओ मेरे मतवाले यौवन।

जाग तू ओ राष्ट्र-वाणी

जाग तू ओ राष्ट्र-वाणी !

कंठ में ज्वालामुखी हो

और अन्तर में हिमानी !

ये लहू की होलियाँ जो,

चल रही हैं गोलियाँ जो;

बिजलियों को चीर आगे

बढ़ रही हैं टोलियाँ जो !

देख, लोहे के शिकंजों में
कसी आकुल जवानी !

आग में भी तू खड़ा रह;
और फूलों से भरा रह !
आँधियों में मुसकुराता
तू हिमालय-सा अड़ा रह !

तू पराजित जाति के
अपमान की जलती निशानी !

मृत्यु से तुझको न भय हो;
वज्र - सा तेरा हृदय हो !
पद जहाँ पड़ जायँ, तेरी
ही वहाँ निश्चय विजय हो !

शोषितों की, पीड़ितों की,
तू सुना युग की कहानी !

मुझे चाहिये दुर्मद यौवन

मुझे चाहिये दुर्मद यौवन !

सुन्दरता हो या न, किन्तु

उच्छृङ्खल हो जीवन की धारा !

अगम-अगाध सलिल हो निर्मल,

अन्त - हीन हो कूल - किनारा !

कल-कल-छल-छल करती लहरें,

अमित उमंगों का नित-नर्तन;

जो मेरा अस्तित्व डुबो दे,

मुझे ऐसा यौवन !

मुझे चाहिये दुर्दम यौवन !

पैदल कंटक-वन में दौड़े,
निर्मम शिला-खण्ड को तोड़े !
चीर चले सागर-सर-निर्झर,
बाधा से न कभी मुख मोड़े !
गिने न योजन-कोस, बने
स्वातंत्र्य-यज्ञ-पावक की ईंधन;
जो मेरी कायरता हर ले,
मुझे चाहिये ऐसा यौवन !

मुझे चाहिये केवल यौवन !

सुखमय करे सृष्टि को, क्षण में
करे नियम का सीमोल्लंघन;
कण-कण हो स्वच्छन्द, इसी जग
में नन्दन का हो अभिनन्दन !
पाँवों की बेड़ी को काटे,
मुक्त करे जीवन का बन्धन,
जो मुझको उल्लास-ज्योति दे,
मुझे चाहिये ऐसा यौवन !

वृथा जन्म, उसका जीवन

वृथा जन्म, उसका जीवन !

मिटा सका जो मनुज न भू से
स्वेच्छाचार, दमन का शासन !
सभय चूसता जो पापी नर
चोर-डाकुओं का सिंहासन !
गिरे गाज उसके मस्तक पर,
जिसका इतना अधःपतन हो !
गौरव के रजकण में अर्पित
जरा-जीर्ण जग का कण-कण हो !

वृथा धरा-अवतरण, मरण !

सह न सका जो समर - क्षेत्र में
कुसुम-शरीरों पर खरतर शर;
अरे, मृत्यु वह क्या ? आयी जो
पाप - पंक - पर्यंक - अंक पर !
शूर सदा मरते शर - शय्या
पर अपनी अन्तिम घड़ियों में;
वहाँ एक बर्ताव बरतता
फुलझड़ियों में—हथकड़ियों में !

जग यह जन्म-मरण-रण भीषण !

यहाँ वही नर सदा जीतता,
जिसकी वीर भुजाओं में बल;
दुर्बल भार जगत के; रोते
कायर मन-ही-मन झख प्रतिपल !
छाती में हो साहस, उर में
पौरुष-सम्बल का अभिसंचय;
विजय - द्रौपदी वरण करेगी
किसी धनञ्जय को ही निर्भय !

मुझे बना दे मा, निर्भय

मुझे बना दे मा, निर्भय !

भर दे मेरे रोम-रोम में
विद्युत, उच्छृङ्खल साहस;
फड़क उठे नव रस-प्रवाह से
जड़ जीवन, तन-मन, नस-नस !
जिससे तोड़ सकूँ कारा
लौह-द्वार का हिम-प्रत्यय;
गूँजे शत-शत प्राणों से, जय !
भारतेश्वरी की जय—जय !

बना हृदय सुकुमार, सदय!

जिससे पिसे न निर्बल मेरे
मत्त - प्रहारों से उद्धत;
सुनूँ पीड़ितों की करुणामय
कातर ध्वनियाँ अप्रतिहत!
करे न असहायों के उर में
मेरा प्रबल भुजाबल घाव;
भर दे मा, मेरे अन्तर में
तू सेवक के सुन्दर भाव!

बलमय, धीमय, तेजोमय!

प्रणय-सूत्र में गूँथ हृदय के
सारे पावन तारों को!
मोहनमाला - सी पहना दे
तू अपने ही प्यारों को!
एक बार भी मस्तक तेरे
चरणों में यदि झुक जाये,
तो यह तेरा सुत जीवन का
सुभग अमृतफल मा, पाये!

तापस-तरुणों के सेनादल

तापस - तरुणों के सेनादल;
चल, दल वन - पर्वत चल रे चल !

तुम दुर्विजेय, तुम मृत्युञ्जय;
बाधा-विमुक्त, उन्मद, निर्भय !
बलमय, जीवनमय, यौवनमय;
अनुपम, अखण्ड, तुम चिर-अव्यय !

गौरव की जला ज्वाल उज्ज्वल;
चल, दल वन-पर्वत चल रे चल !

यह देश, रुद्र का विकट धनुष;
जीतता वही; जो वीर पुरुष !
छाती में जिसकी दुःसाहस:
हो भुजदण्डों में [illegible]-रस !

यह भू शूरों का क्रीड़ा-स्थल;
चल, दल वन-पर्वत चल रे चल !

क्या तुम्हें चाहिये राज-भोग ?
निष्ठुर रे निष्ठुर कर्म-योग !
पथ में न मिलें क्यों सिन्धु-ताल ?
बढ़ लाँघ उन्हें तू ऐ विशाल !

तापस तरुणों के सेनादल;
चल, दल वन-पर्वत चल रे चल !

मार्ग-भ्रष्ट

अन्तराल;

तमपूर्ण निशा का निबिड़ जाल !
झुकता विराट् का तुङ्ग भाल;
झंझा के झोंकों से कराल !
व्याकुल नीड़ों में विहग-बाल;
बेसुध रे जग के आल-बाल !
पथ अन्तहीन, मरुवत्, विशाल;
यह घोर विपिन का अन्तराल !

महानाश;

उमड़ा नटवर का ध्वंस-लास !
उन्मुक्त महाम्बर, महावात;
पल-पल पर होता वज्र-पात !
दारुण - प्रलयानल - भस्मसात;
दिनकर-निशिकर, संध्या-प्रभात;
करता ताण्डवकर अट्टहास !
यह रक्त-पर्व का महानाश;

सावधान:

रे खो न अविचलित दिशा-ज्ञान !
हो रहा कहीं यदि मृत्यु-घात;

तो कहीं तीव्र ध्वनि जल-प्रपात !
तू कोमल उर ; तन वारिजात !
अज्ञात देश—अज्ञात यात !
हों शिथिल न भय से लता-प्राण;
इस अग-जग में रे सावधान !

क्या दिग्भ्रम ?

असफल तव तापस का सब श्रम !
यह निशाचरों का मायावन;
छलनामय इसका रज-कण-कण !
रलमल करता पथ पर भुजङ्ग;
हरि-करि, प्लवङ्ग, शूकर, कुरङ्ग !
चल देख-भाल सम्मुख क्रम-क्रम;
हो गया तुझे क्या रे दिग्भ्रम ?

दृढ़ निश्चय;

कर प्राणों में साहस-संचय !
आये यदि शंका - विघ्न - बोध;
तू रुक न, रोक मन; चल अरोध !
संग्राम ग्राह्य; होता न त्याज्य !
शूलों में ही वह फूल-राज्य !
हो तेरा यहीं शक्ति-परिचय !
रे दृढ़ निश्चय कर, दृढ़ निश्चय !

जीवन की ज्योतिर्धारा

जीवन की ज्योतिर्धारा;
कहाँ रुकेगा आज कहो तो,
हिम का प्रखर स्रोत प्यारा ?
महाकाश के नील नीड़ में
सिहरा क्यों यह विश्व विहंगम ?
किरणों की स्वर्णाभ शलाका
भेद चली तम का अन्तर्तम !
जीवन की ज्योतिर्धारा—
यह किसके ललाट पर चमका
प्राची का प्रभात - तारा ?

जागे पद्म - मुकुल - मानस में
सुख–मधु–नैश–जागरित अलिगण;
प्रतिगुंजित पल्लव - पल्लव पर
स्फीत भावनाओं का शिंजन !

जीवन की ज्योतिर्धारा—
भर जाने दे तनिक रश्मियों
से मेरी तमसा - कारा !

मंगलमय यह वेला, नीरव
वातावरण, शान्त उपवन–वन;
द्रुम–द्रुम पर , उत्पल–उत्पल पर
छायी सकल कामना उन्मन !

जीवन की ज्योतिर्धारा—
संचित कर दे नव–कलियों में
अपना स्नेह - पुलक सारा !

इस पृथ्वी पर कौन अमर-पद पायगा

इस पृथ्वी पर कौन अमर-पद पायगा ?
यश-अपयश ही एक शेष रह जायगा !

आती है यदि आज, मृत्यु तो आवे;
महाप्रलय विध्वंस - रागिनी गावे
किन्तु, हमारा हृदय भीति क्यों पावे ?
नयन - पुटों से अश्रुधार बरसावे ?

प्रबल जीतता, दुर्बल धक्के खायगा;
इस पृथ्वी पर कौन अमर-पद पायगा ?

ये जो दिखते रवि, शशि, ग्रह, उडु नाना;
अन्त सभी का, मिट्टी में मिल जाना !
सबको पड़ी चिता की गोद सजाना,
स्वाद मौत का सबने मर कर जाना !

किसे न माया-कानन यह भरमायगा ?
इस पृथ्वी पर कौन अमर-पद पायगा ?

इसीलिये झटपट कुछ कर लो, धर लो;
जीवन-नौका हिले न, साहस वर लो;
बीत रहा वय, याद जरा यह कर लो;
पूजा के सुमनों से झोली भर लो!

रोओगे, जब समय-स्रोत बह जायगा!
इस पृथ्वी पर कौन अमर-पद पायगा?

मेरा विद्रोही कवि-जीवन

मेरा विद्रोही कवि - जीवन—

उठा उर्ध्व, तज आज धरातल,

नगपति का करने चुम्बन !

अधिकृत कर कौशल, शासन;

स्वर्णालंकृत सिंहासन !

हिला स्वयंभव धाताओं को

द्वीपान्तर में निर्वासन,

मेरा दिग्विजयी कवि - जीवन—

एकछत्र सम्राट बना है

बैठा पहन कीर्ति - कंकण !

कण-कण में कर प्रभा प्रसारित,

खोल अग्नि-नेत्रों को स्फारित,

अपनी ही प्रताप - ज्वाला में

परिज्वलित, भासित, विस्तारित,

मेरा मतवाला कवि - जीवन—

धूमकेतु - सा आज खमंडल

में आया जलता प्रतिक्षण !

एक नयन में अमृत-विन्दु कल

और अपर में उग्र हलाहल !

खण्ड-खण्ड कर परशु-दण्ड से

रीति-शृङ्खलाओं का शृङ्खल,

मेरा प्रलयङ्कर कवि - जीवन—

आज महा - नटराज - सरीखा

करता रण - ताण्डव - नर्तन !

चकित समाज, विश्व-उर विस्मित,

द्रुतगति देख सकल जग स्तम्भित!

झुका न सकता कहीं किसीके

भय से दुर्विजेय सिर गर्वित !

मेरा अभिमानी कवि - जीवन—

मुक्त-हस्त हो आज लुटाता

राशि - राशि मुक्ता-कांचन !

लंघन कर पिङ्गल-नियमन,

चिन्ह पुरातन, वृद्ध -वचनः

भुवन-भुवन में फैला प्रतिभा-

मेरा मृत्युञ्जय कवि - जीवन—

दौड़ रहा साहित्य – क्षेत्र में
प्रबल वेग से चपल - चरण !

दुर्विनीत, दुर्मुख, दुर्जय,
दुःसाहसमय, आशामय,

खड़ा आज झंझावरोध में
अटल हिमालय - सा निर्भय;

मेरा ज्योतिर्मय कवि-जीवन—

वह्नि-शिखा–सा स्वर, अदम्य,
अस्पृश्य, अमर, उन्नत, पावन !

जीवन का झरना

यह जीवन क्या है ? निर्झर है;
मस्ती ही इसका पानी है।
सुख-दुख के दोनों तीरों से
चल रहा चाल मनमानी है!

कब फूटा गिरि के अन्तर से ?
किस अंचल से उतरा नीचे ?
किन घाटों से वह कर आया
समतल में अपने को खींचे ?

निर्झर में गति है, यौवन है;
वह आगे बढ़ता जाता है;
धुन एक सिर्फ है चलने की,
अपनी मस्ती में गाता है!

बाधा के रोड़ों से लड़ता,
वन के पेड़ों से टकराता;
बढ़ता चट्टानों पर चढ़ता,
चलता यौवन से मदमाता!

लहरें उठती हैं, गिरती हैं;
नाविक तट पर पछताता है,
तब यौवन बढ़ता है आगे,
निर्झर बढ़ता ही जाता है!

निर्झर में गति है, जीवन है;
रुक जायेगी यह गति जिस दिन,
उस दिन मर जायेगा मानव,
जग दुर्दिन की घड़ियाँ गिन-गिन!

निर्झर कहता है, बढ़े चलो;
तुम पीछे मत देखो मुड़ कर!
यौवन कहता है, बढ़े चलो;
सोचो मत, होगा क्या चल कर?

चलना है, केवल चलना है!
जीवन चलता ही रहता है!
मर जाना है रुक जाना ही,
निर्झर यह झड़ कर कहता है!

चिरयात्री

मैं एक अपरिचित यात्री हूँ;
जाना है इतनी दूर मुझे।
है किसने पिला दिया जीवन–
मद का प्याला भरपूर मुझे?

बस, खींच रहा कोई मुझको:
मैं विवश खिंचा-सा जाता हूँ!

मैं चलता, चलने को कोई
कर रहा क्योंकि मजबूर मुझे!

मैं किसी दिवस थक जाऊँ भी,
ये पैर नहीं मेरे थकते:
पथ-भ्रष्ट नहीं मुझको जग के
ऐश्वर्य-प्रलोभन कर सकते!

मुझको न किसीसे कुछ परिचय:
कुछ पास नहीं मेरे सम्बल!
मैं एक अपरिचित यात्री हूँ;
इतना ही ज्ञात मुझे केवल!

मत पूछ, कहाँ से आया हूँ;
किस देश आज जाना मुझको!
यह भी न पूछ तू मुझे कि क्यों
जग कहता दीवाना मुझको?

क्या सोच-समझकर इस पथ पर
रक्खे थे मैंने प्रथम-चरण;
सूझा इस निर्जन कानन में
क्यों मस्ती का गाना मुझको?

दोनों ही पार्श्वों में पथ के
हो रहा कामना का नर्तन;
मैं सुनता कोकिल का कलरव;
इच्छा के भ्रमरों का गुंजन।
किसने भेजा है मुझे यहाँ?
सन्देश कौन-सा लाया हूँ?
कुछ भी है पता नहीं मुझको;
मत पूछ, कहाँ से आया हूँ?

❀ ❀ ❀

सुन पड़ा किसीका परिचित स्वर;
मुझको किसने आह्वान किया?
चल दिया अचानक मैं पथ पर,
मैंने सहसा प्रस्थान किया!

देखा अवरुद्ध भवन सारे;
सन्तरियों से प्रति-द्वार घिरे !

मैंने 'मानव की जय' कह कर
मानवता का गुण-गान किया !

वह शंख-घोष मेरा सुन कर
जागी अणु-अणु में तरुणाई !
मैंने नगपति के शिखरों पर
निज विजय-पताका फहराई !

फिर मेरी वाणी से उतरा,
पृथिवी का स्वर्ग सुखद-सुन्दर;
मैं चौंक उठा, उस दिन ज्यों-ही
सुन पड़ा किसीका परिचितस्वर!

* * *

जब जग के प्यासे अधरों पर
मादक-कारी मधु-पान मिला;
जब लोभ-मोह-मय भूतल को
सुख-निद्रा का वरदान मिला!

तब पाप स्वर्ण का स्पर्श मुझे.
वैभव-विलास सन्ताप हुआ;

मुझको अपना यह मार्ग और
वायव्य नया ईमान मिला !

मैं सदा एक-सा एकाकी;
मैं नित्य एक-रस गृह-त्यागी!
चलता सदैव अपने पथ पर
मैं निर्वासित हूँ वैरागी!

मलयानिल सुखा नहीं सकते
मेरे शरीर के श्रम-सीकर;
मैं चलता हूँ तब भी, होता
मधु-घट जब जग के अधरों पर!

❀ ❀ ❀

चिन्तित-सा कभी न कर सकते
ये मान और अपमान मुझे;
मैं यहाँ एक परदेसी हूँ,
बस, इतना-सा है ज्ञान मुझे!

मैं युग-युगान्त से चलता हूँ;
कुछ पता नहीं कब तक चलना!
मैं अमृत-तत्त्व को खोज रहा;
करना उसका संधान मुझे!

मैं मुक्ति चाहता कब अपनी?
कब अपनाया मैंने बन्धन?
मुझको तो यहाँ पकड़ लाया
सन्तप्त मनुजता का क्रन्दन!

मैं जब-तक जीवित हूँ. मेरे
निश्वास नहीं ये मर सकते;
कीटाणु अमरता के मुझको
चिन्तित-सा कभी न कर सकते।

❀ ❀ ❀

इस पथ के वनवासी तरु-वर;
पशुपक्षी सब स्वच्छन्द यहाँ!
उड़ता पुष्पों के प्राणों से
नित सुषमा का मकरन्द यहाँ!

होता व्यवहार यहाँ निशि-दिन
निस्स्वार्थ प्रेम का आपस में;
मैं चलता, चलने में मिलता
मुझको अतुलित आनन्द, यहाँ!

इस विस्तृत विश्व-सरोवर में
शतदल के शत-शत दल खिलते;
जितने तापस, जो वनचारी,
सब सस्मित-मुख मुझसे मिलते!

मैं देख रहा, मेरे पीछे
चलते द्रुत-गति से जो सहचर;
हँस कर करते स्वागत मेरा
इस पथ के वन-वासी तरुवर!

❀ ❀ ❀

फैला कर बाँहें वल्लरियाँ
करती हैं मेरा आलिङ्गन;
'दो क्षण भी मेरे निकट रहो'
आता कुंजों से आमन्त्रण !

मैं दो-क्षण भी कैसे अपना
बहलाऊँ जी इस मधुवन में ?

द्रुत-गति से भागा जाता जो
मेरा यह आँधी का जीवन !

बहुमूल्य एक क्षण भी मेरा;
कैसे मैं खो दूँ इस क्षण को ?
मैं चल देता तत्क्षण अपने
पथ पर ठुकरा कर मधु-कण को !

मैं हँस कर बढ़ जाता आगे;
संकेत मुझे करतीं परियाँ !
मैं बच जाता, झुकतीं ज्यों-ही
फैला कर बाँहें वल्लरियाँ !

❀ ❀ ❀

मेरे असीम नभ में नीरव
होता रवि-शशि का उदय नहीं !
पर, कहो न, मेरे दृग अचपल;
मेरा हृदय नहीं !

मैं सुन्दरता का प्रेमी हूँ;
फिर भी बढ़ जाता यह कह कर;-
'कैसे मैं तुमसे प्रेम करूँ !
मुझको इतना भी समय नहीं !'

जब मेरी विनत पुतलियों पर
तितलियाँ बैठ जातीं आकर;
मैं कहता उनसे—'क्षमा करो:
जाने दो मुझको हे सुन्दर !'
मैं एक तपस्वी हूँ जग का;
मैं मना न सकता हूँ उत्सव !
संध्या-प्रभात, कोई न कहीं
मेरे असीम नभ में नीरव !

❀ ❀ ❀

विस्तीर्ण मार्ग मेरे सम्मुख;
मस्तक पर शोभित नीलाम्बर !
छाया का शीतल छत्र मधुर,
चलता ले ऊपर नव-जलधर !
फल देते नाना विटपी-गण
कर प्रेम-सहित मुझको इंगित;
मैं मौन पथिक; चलता रहता
निशि-वासर अपने ही पथ पर !

कर लूँ आलाप किसीसे मैं,
इतना मुझको अवकाश कहाँ ?
दो शब्द किसीको मैं कह दूँ,
है इसका भी अभ्यास कहाँ ?

मैं जग का दुख लेकर देता
बदले में अपना सारा सुख;
मैं द्रुत—गामी हूँ पद—चारी,
विस्तीर्ण मार्ग मेरे सम्मुख !

❀ ❀ ❀

मैं..दूर-देश से आता हूँ;
मुझको क्षण भर विश्राम नहीं !
मैं बढ़ता जाऊँगा आगे,
रुकने का मेरा काम नहीं !

मैं कहीं ठहर जाऊँ दो-पल,
यह आज्ञा मुझको मिली नहीं;
मेरे नयनों में नींद कहाँ ?
मैंने पाया आराम नहीं !

मुझको न रोक सकते पर्वत;
निर्झर-नद विचलित कर सकते!
संकट न अपरिमित भी आकर
मेरा साहस-बल हर सकते !

मैं मुक्त मार्ग के गीत बना
इस निर्जन पथ में गाता हूँ।
है दूर—देस जाना मुझको,
मैं दूर—देश से आता हूँ।

जवानी का लड़कपन

आज लड़कपन फिदा हुआ रे
कुछ इस तरह जवानी पर;
तैर चले कागज के दिल के
पुर्जे – पुर्जे पानी पर !

बदला सीन, निराला आलम,
एक नयी दुनिया, मानो !
नाव लगी ऐसी घाटी में,
जहाँ न कोई, सच जानो !

आफत के दीवाने राही
कुछ उतरे, कुछ फिसल पड़े;
खोये कुछ, कुछ भूले-भटके;
कुछ तट पर ही रहे खड़े !

रूठे – बिछुड़े लैला – मजनूँ
पुर-परिजन-घर छोड़ चले !
तोड़ मुहब्बत की जंजीरें
क्या जानें, किस ओर चले !

यह पगडण्डी बड़ी अनोखी :
आठों पहर कुशल - मंगल !
कदम - कदम पर बाग-बगीचे,
कोस - कोस पर वन - जंगल !

बजी बाँसुरी, डोला मनुआ ;
ग्वाल - बाल की मति न्यारी !
ले लो गोद ; चूम लो मुखड़ा ;
ठुमक पड़ूँ भर किलकारी !

पत्थर पर भी घास उगाई ;
पानी पर रेखा खींची !
बाँधा सागर को गागर में ;
राह चला ऊँची - नीची !

लाल कटोरा, दूध गुलाबी ;
जय हो चंदा मामा की !
राजभवन बन गयी झोंपड़ी ;
मैत्री कृष्ण - सुदामा की !

धनुष-बाण सुकुमार करों में :
पर्वत का शिखरारोहण !
काछनी काछ कदम्ब-तले, सुन;
नाच रहे राधा - मोहन !

बनी भीत बालू की, सींकों
का पुल, जब मोहर कौड़ी ;
तारें बिछीं; बहायी दरिया ;
रेल - ट्राम - मोटर दौड़ी !

मूँछों का हो गया सफाया ;
दाढ़ी पर उस्तरा फिरा !
गिरीं लटें अटपट कानों पर ,
कुछ जादू का चक्र घिरा !

पढ़ा पहाड़ा , ओनामासी ;
सीखी फिर बोली तुतली !
नाच उठी कुछ अजब शरारत
से दोनों दृग की पुतली !

राजकुमार धूल में लिपटा ;
पीताम्बर की सुध न रही !
पृथ्वी का सम्राट बेचता
हाट - बाट में दूध - दही !

अप्राप्त

जो मिलता, लेकिन मिला नहीं,
क्यों उसकी चिन्ता करता है ?
जो बीत गया, उसके उधेड़बुन में
भी कोई पड़ता है ?

जो चला गया कल, जाने दे !
आगामी कल की चिन्ता कर !
पछताना क्या उसपर पीछे,
खो दिया सुनहला जो अवसर !

जो मिल जाता है, क्या कम है ?
जो वर्त्तमान है, अवसर है !
तू छोड़ न उसको, जो भविष्य में
आने वाला है, सुन्दर है !

सत्य

यदि तुम सच्चे हो, सचमुच ही
सच्चाई से रहते हो!
तो कहते क्यों फिरो कि जो कुछ
कहते तुम, सच कहते हो!

जो झूठे हैं, आखिर वे भी
तो ऐसा ही कहते हैं!
ठीक-ठीक क्या कह पाते, हम
जैसा जो-कुछ रहते हैं।

करने वाले तो कर देते,
वे न पीटते फिरते ढोल!
कहने वाले नहीं जानते,
होती सदा ढोल में पोल!

यदि तुम सच्चे हो, निश्चय ही
कार्य तुम्हारे कह देंगे!
खुद तुम लोहा बने रहो,
वे लोहा आप मान लेंगे!

मानव, तू निर्भय बन

निर्भय बन, निर्भय बन !
मानव, तू निर्भय बन !

तू सशक्त, महा - प्राण:
गा न आज करुण गान,
संकट से हार मान,
खो न ध्येय तू महान् !

जीवन-मय, पौरुष-मय,
निश्चल, निःसंशय बन !
मानव, तू निर्भय बन !

सोने - सा तपता रह आग में,
फूलों - सा हँसता रह बाग में:
सुख में मत गर्व कर,
दुख में मत अश्रु भर,
आपद को झेलना,
बाधा को ठेलना,

आगे बढ़, आगे बढ़ ।
आसमाँ दहाड़ता,
सागर ललकारता,
कौन वह पुकारता—
सावधान !

सावधान !
पाँव यह रुके नहीं, रुके नहीं !
शीश यह झुके नहीं. झुके नहीं !
दानव के सामने !

मानव तू, मानव है !
पृथ्वी का गौरव है !
सृष्टि में न अन्य है
तुझ - सा । तू धन्य है !

जीवन का यह समर,
तू अमर, तू अमर;
मरने से होता डर ?
छिः ! छिः ! तू कैसा नर !
उठ, उठ, कुछ भी तो कर,
बाहर से पत्थर तू,
भीतर से किसलय बन ।
मानव, तू निर्भय बन !

कर्त्तव्य

यदि इच्छुक हो सुख के तुम जीवन में,
तो अपनी आत्मा का बन्धन तोड़ो !
आने दो न भीरुता - जड़ता मन में;
कर्म करो बस, फल की आशा छोड़ो !

एक खेल ही समझो तुम जीवन को;
हार-जीत से क्या तुमको मतलब है ?
खेलो जब तक, व्यर्थ न समझो क्षण को;
यहाँ सफलता जो कुछ है, करतब है !

सीधा-सा मत समझो जीवन-पथ को;
टेढ़ा - मेढ़ा यह चलता सरिता - सा !
चलो, बढ़ाओ आगे अपने रथ को !
अगर तुम्हें हो उन्नति की अभिलाषा !

श्रम तो करो, सुफल हैं देनेवाले !
रह न भाग्य पर निर्भर सब कुछ खो दो !
तुम आप नाव जीवन की खेनेवाले !
पार लगाओ या मँझधार डुबो दो

चढ़ो शिखर पर, जैसे आँधी चढ़ती—
सबको झकझोड़, मरोड़ हिलाती !
तुम बढ़ो सामने, जैसे सरिता बढ़ती—
तोड़ पहाड़ों की पत्थर की छाती !

खेल समझते हैं जो चतुर खिलाड़ी,
वे संकट से कभी नहीं घबड़ाते !
उन्हें मौत भी लगती है अति प्यारी,
पीछे हट कर फिर आगे बढ़ जाते !

साहस

हिम्मत कर, आगे बढ़ तो तू,
फिर नाम न ले तू रोने का !
क्यों बार-बार चिल्लाता है—
यह काम न मुझसे होने का !

वह कौन काम है ? बता सही,
जिसको औरों ने कर डाला;
पर, नहीं जिसे तू कर सकता ?
तू चुप क्यों है ? कह तो लाला !

क्या कोशिश भी की है तूने ?
फिर कहाँ भाग्य का दोष रहा ?
बेकार समूची दुनिया को
तू पानी पीकर कोस रहा ।

किस्मत को किसने देखा है ?
तदबीर सभी जन करते हैं !

है चाह जहाँ, है राह वहीं,
कायर रो-रो कर मरते हैं।
फिरते हैं वीर - बहादुर जो,
ले अपनी जान हथेली पर !
रुपया भी, कहीं सुना है क्या,
मरता है कभी अधेली पर ?

यदि सोना है, तो कुछ चिन्ता
तू कर न आग में जलने की !
क्या फिक्र भला पत्थर को भी
होती पानी में गलने की ?
तू झंझट से, असफलता से,
क्यों संकट से घबड़ाता है ?
अपने को खतरे में डाल
मर्द जो है, वह तो मुस्काता है !

तू मांग न ईश्वर से, तुझको
वह सुख दे, सुविधा दे, औ यश दे !
तू अपने कर्मों से जता उसे,
वह दुख सहने का साहस दे !
वह साहस, जिससे आसमान में
वायु - यान मँड़राते हैं !
वह साहस, जिससे एवरेष्ट पर
मृत्युञ्जय चढ़ जाते हैं !

वह साहस, जिसने भूमण्डल को
हस्तामलक बनाया है !
वह साहस, जिसने सागर को
बाँधा है, व्योम झुकाया है !

तू कोशिश भी तो कर, पागल !
कोशिश ही करने का ढव है !
फिर स्वयं कहेगा तू, कुछ भी
दुनिया में नहीं असम्भव है !
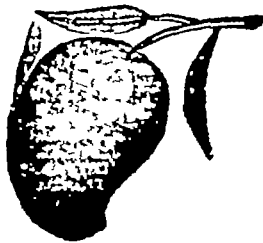
आगे बढ़

आगे बढ़, आगे बढ़,
हिम्मत कर, हिम्मत कर !

हिम्मत कर, बढ़ता चल !
चोटी पर चढ़ता चल !
पैरों के नीचे आ
जाये जो, दलता चल !
केवल तू चलता चल !

आगे बढ़, हिम्मत कर !
हिम्मत कर, आगे बढ़ !

जय का आनन्द मना
नये गीत बना - बना !
हँस - हँस कर लूट मजे,
दुनिया का मौज घना !

तेरा युग करता है
युग से तेरी पुकार !
जाना मत भूल कहीं
सदियों की आज हार !
छा ले तू आसमान !
छा ले सारा जहान !

आगे बढ़, हिम्मत कर !
हिम्मत कर, आगे बढ़ !

पूरब में, पश्चिम में,
दक्खिन में, उत्तर में,
चारों ओर शोर है;
छायी घटा घोर है !
लूटता पराया धन
डाकू और चोर है !
टूटती हैं बिजलियाँ,
उलट रहा आज तख्त:
सावधान, सावधान !
नाजुक है आज वक्त !

आगे बढ़, आगे बढ़ !
हिम्मत कर, हिम्मत कर !

शंका. भय, फिक्र नहीं !
निर्भय चल, निर्भय चल !

मौत है पुकार रही !
दुनिया ललकार रही !
तोपों के गर्जन में
जिन्दगी दहाड़ रही !
सागर की लहरें यदि
आती हैं. आने दे !

धरती यदि शोणित की
प्यासी है, पीने दे !

अन्धकार घोर है;
आँधी का जोर है !
तू न डर, हार नहीं !
यदि है पतवार नहीं !
खेता चल, जीवन की
नैया को खेता चल !
दुनिया को जो कुछ है
देना, वह देता चल !
प्रेम-प्रीत लेता चल !

आगे बढ़; आगे बढ़ !
हिम्मत कर, हिम्मत कर !

मंजिल यदि दूर है !
पैर थका, चूर है !

फिर भी तू हिम्मत कर !
जीत है, जरूर है !
दुश्मन यदि जिद्दी है,
प्रमत्त है, कठोर है;
दुनिया में तू भी तो
एक और, एक और,
चालिस करोड़ है !

अपने को याद कर,
अपना घर आप ही न
यों तू बर्बाद कर!
चाहे तो, क्या न आज
तू भी कर सकता है?
मिल कर सब चुल्लू से
सागर भर सकता है!

ठोकर दे सकता है,
दुश्मन से चाहे तो,
बदला ले सकता है।

आगे बढ़, आगे बढ़!
हिम्मत कर, हिम्मत कर!

विभेद

हम दोनों में कितना अन्तर;
तू मधु-सेवी, मैं विष - पायी !

जब तूने था मदिरालय में
मधु - बाला का आह्वान किया;
उन्मत्त तृषा से व्याकुल हो
अंगूरी - मद का पान किया !

तब मेरे अधरों पर छलकी
अति-तिक्त हलाहल की प्याली:
मैंने हल्दी की घाटी में
अपना जीवन बलिदान किया !

जब पीकर तू बेहोश पड़ा
था कहीं किसी मधुशाला में,
मैंने प्रलयांगन में ली थी
अभिनव यौवन की अँगड़ाई;
है बहुत बड़ा अन्तर हम में:
तू मधु - सेवी, मैं विष - पायी !

× × ×

जब होता तेरी मधुशाला में
साकी का छमछम नर्तन;
कातर हो क्रन्दन कर उठते
मधु-लोलुप मदिरा-प्रेमी-गण !

तब मेरे आँगन में करती
गर्जन भीषण-तम रण-चंडी;

बजते मतवाले वीरों के
रक्ताक्त करों में असि-कंकण !

जब मधु ने तुझको जीवित ही
रख दिया मृतक की श्रेणी में;

तब मेरे निश्चल प्राणों में
विष से फिर झूमी तरुणाई;
कैसे मैं तेरे साथ चलूँ ?
तू मधु-सेवी, मैं विष-पायी !

× × ×

जिस दिन अधीर मदिरालय में
तेरी मदहोश पुकार हुई;
जिस दिन दीवानों की टोली
मद पीने को तैयार हुई !

उस दिन छिन गया मुकुट मेरा,
गृह-हीन राज्य-श्री रूठ चली;

उस दिन स्वतंत्रता के रण में
मेरे स्वदेश की हार हुई !

जिस दिन मधुबाला ने दी थी
मधु-सुरा पिला चिर-मृत्यु तुझे;

कर गरल-पान उस दिन मैंने
दुर्लभ्य अमरता थी पाई;
मैं मिलूँ बोल तुझसे कैसे ?
तू मधु-सेवी, मै विष-पायी !

× × ×

जब मदिरालस तेरे नयनों की
हो जातीं पलकें भारी;
जब मादकता में खो देता
तू मन की चेतनता सारी !

तब मै करता हूँ सिंहनाद,
बजती अग-जग में रण-भेरी !

मै आग लगाता पानी में,
उपजाता हिम से चिनगारी !

जब तू सँभाल सकता दुर्बल—
सा अपना भी अस्तित्व नहीं.

मैं निखिल राष्ट्र का बनता हूँ
तब एकमात्र उत्तर - दायी:

सम्भव हो मिलन हमारा क्यों ?
तू मधु - सेवी, मै विष-पायी !

× × ×

देखा था जिस दिन तेरे इन
हाथों में फेनिल मधु-प्याला ;
रस - भींगे होठों पर तेरे
शरमा कर झुकती मधु-बाला !

पश्चिम - उत्तर की सीमा पर
उस दिन ललकार उठा कोई,

तोड़ा था किसी विदेशी ने
मेरे सुवर्ण - गृह का ताला !

जिस दिन बेखबरी आयी थी,
तूने तन - मन की सुध भूली;

उस दिन दक्षिण मे थोड़े - से
कुछ वनियों ने आफत ढायी:
कैसे मै तुझसे आज मिलूँ ?
तू मधु–सेवी, मै विष–पायी !

× × ×

थे आमन्त्रित हम दोनों ही,
वारिधि का हुआ हृदय–मंथन:
तू ने पहले ही पहुँच किया
वह मधुबाला का आलिङ्गन !

तुझको मधु-कलश मिला, तूने
पी लिया एक क्षण में सारा;

मैं नीलकंठ - था लिखा भाग्य में
मेरे विष का आस्वादन !

जिस मस्ती ने पौरुष-नाशक
विस्मृति-सन्देश दिया तुझको:

वह मस्ती मेरे जीवन में
अद्भुत नव-जागृति ले आयी;
है एक यही अन्तर हममें;
तू मधु-सेवी, मै विष - पायी !

× × ×

तूने की प्रमदा की सेवा;
मदिरालय को आबाद किया !
जब प्यास लगी, तूने तत्क्षण
साकी-बाला को याद किया !

तू स्वार्थ-विकल, अपने सुख-हित
मद पीकर जग को भूल गया:

मैंने विष पीकर दुनिया को
सुख-शांति-सुधा का स्वाद दिया !

जब मन तेरा डगमग होता;
जब पग तेरे करते डगमग !

तब मैं तूफान—बवण्डर में
सिर खोल चला करता भाई !
किस तरह एक हों हम दोनों ?
तू मधु-सेवी, मैं विष - पायी !

× × ×

जिस क्षण तेरी मधुशाला में
जुड़ते मधु-प्रेमी-गण अगणित;
साकी के एक इशारे पर
उठते सब झूम सुरा-परिचित !
उस क्षण पृथिवी की मानवता
करती होती चीत्कार विकल;
रोते जननी के अंचल में
मेरे सुकुमार क्षुधा - पीडित !
तूने अपनाया मद पीकर
कायरता—आलस का जीवन;
मै मुस्काता हूँ शूलों में;
मै वनचारी, कण्टक—शायी !
कैसे मैं तुझसे आज मिलूँ !
तू मधु-सेवी, मैं विष-पायी !

× × ×

तेरा पथ जाता उधर, जहाँ
बहती निशि-वासर मद-धारा;

मेरे - हित शूली, दमन, दण्ड;
मेरा विश्राम - भवन कारा !

कर - बद्ध सदैव मनाता तू—
'मेरी मधुशाला रहे अचल !'

मैं कहता—मानव की जय हो;
निर्भय हो जगती तल सारा !

तेरे सिर पर मधु-कलश भरा;
मैं फूँक रहा विष की वंशी !

तुझ में वसन्त तन्द्रा; मुझपर
नवयुग की प्रलय-शिखा छायी;
कैसे मैं तुझसे आज मिलूँ ?
तू मधु-सेवी, मैं विष-पायी !

× × ×

जिस वक्त किया करता मधु पी
पथ में तू नित्य उपद्रव नव;
मैं कालकूट पीकर उस क्षण
भैरव बन करता रण—तांडव !

मैंने तो तेरा मधु देखा;
मधु-प्रिया और मधुशाला भी !

तू एक बार भी देख, सखे !
यह अनल हलाहल का उत्सव !

इस विष-घट में वह उत्तेजन;
वह शक्ति, करे जो कल्पान्तर !

तू विष लख कर थर-थर कम्पित;
मुझको मदिरा से उबकाई !
कैसे हम दोनों साथ चलें ?
तू मधु-सेवी, मैं विष-पायी !

× × ×

तू मद पीकर मद-मत्त बना;
महिमा मधुशाला की गाता !
पर, मैं तो अपने गीतों में
इस विष को ही चित्रित पाता !

जिन छन्दों में धारण करते
आकार स्वप्न तेरे सुन्दर;

मैं उन छन्दों में बाँध व्योम से
अग्नि - कुमारों को लाता !

तेरे प्रलाप ये मद्यप के;
मैं शंख-घोष करता रण में !

हम दोनों के ही बीच खुदी
यह एक विषमता की खाई;
कैसे मैं तुमसे आज मिलूँ ?
तू मधु-सेवी, मैं विष-पायी !